March 30, 2023 | **Updated:** 3 seconds ago

जमात-ए-इस्लामी हिंद के 75 साल: एक आलोचनात्मक विश्लेषण
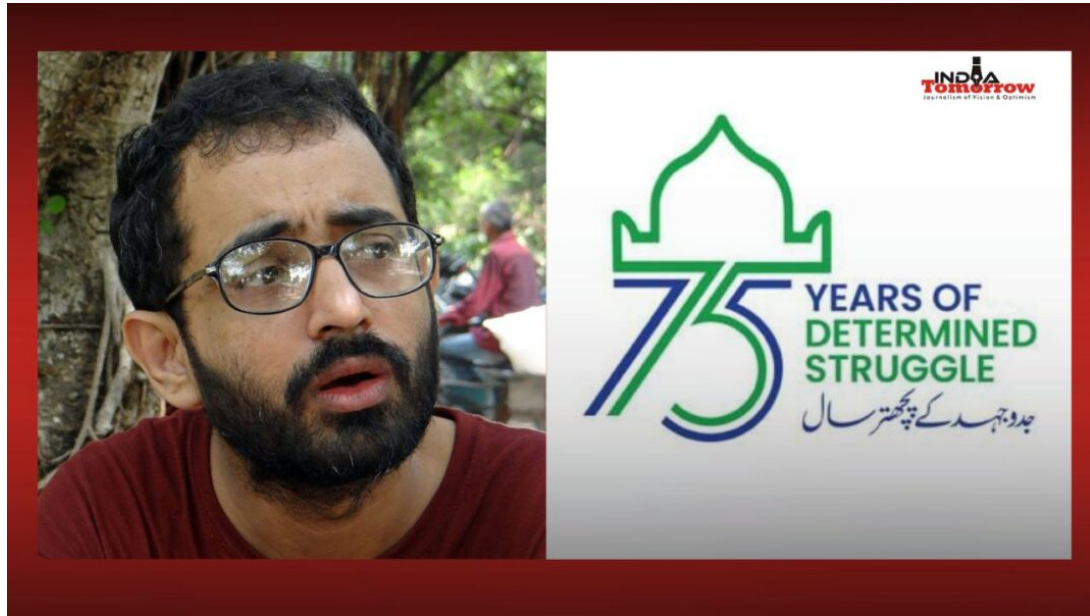
-अभय कुमार

नई दिल्ली | अक्सर देखा गया है कि संस्थाएं स्थापित तो हो जाती हैं, लेकिन वे आंतरिक कलह और निजी स्वार्थों में उलझ कर रह जाती हैं. हालांकि, इस कड़वी सच्चाई को ध्यान में रखते हुए, जब हम जमात-ए-इस्लामी हिंद के इतिहास और उसके योगदान को देखते हैं, तो यह कहा जा सकता है कि यह संगठन इन सबसे अलग है.

इस विशिष्टता के साथ जमाअत इस्लामी हिंद के सदस्यों और कार्यकर्ताओं के लिए यह खुशी की बात है कि उनके संगठन ने अपने गठन के 75 साल पूरे कर लिए हैं. यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि जमात-ए-इस्लामी की शुरुआत 1941 में मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी के आह्वान पर लाहौर में एक कार्यक्रम में हुई थी.

मौलाना मौदूदी को महान इस्लामी विचारकों में से एक माना जाता है. वह जीवन के सभी क्षेत्रों में इस्लाम को लागू करने के समर्थक थे.

भारत का विभाजन जमात-ए-इस्लामी के भी विभाजन का कारण बना. 1948 में जमात-ए-इस्लामी हिंद का नए सिरे से गठन हुआ.

जबकि JIH के पहले अमीर (प्रमुख) मौलाना अबुल लैस इस्लाही नदवी थे, वर्तमान अमीर (अध्यक्ष) इंजीनियरिंग पृष्ठभूमि वाले सैयद सआदतुल्लाह हुसैनी हैं.

जमाअत की अपार सफलता का श्रेय इसके कार्यकर्ताओं को जाता है जिन्होंने कम संसाधनों में भी ख़ामोशी के साथ जमाअत के कार्यों के लिए कड़ी मेहनत की और सुर्खियों/ लाइमलाइट से दूर रहे.

जमाअत इस्लामी हिंद को स्वतंत्र भारत में दो बार प्रतिबंधित किया गया और इसके शीर्ष नेताओं को जेल जाना पड़ा. इसके कार्यालयों पर छापे मारे गए, लेकिन इसके कैडर इन समस्याओं और दबाव के बावजूद अपने मिशन पर लगे रहे. उनके प्रयासों के कारण आज जमाअत इस्लामी हिंद एक राष्ट्रव्यापी संगठन है जिसकी दक्षिण भारत में मज़बूत उपस्थिति है. मोहल्ला स्तर पर इसके फ्रंटल संगठन सक्रिय हैं.

जमाअत के विरोधी भी स्वीकार करते हैं कि इस के सदस्य और कार्यकर्ता संगठित और व्यवस्थित तरीके से जमाअत का काम करते हैं. उन्हें इतनी अच्छी तरह से प्रशिक्षित किया जाता है कि वे चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में भी शांत रहते हैं और धैर्य से काम लेते हैं. वे क्रोधित नहीं होते, कठोर वचनों से बचते हैं और विरोधियों को तर्क और तथ्य से समझाने का प्रयास करते हैं.

जमात-ए-इस्लामी हिंद के कैडर खुद को इस्लाम और मुस्लिम समाज तक ही सीमित नहीं रखते बल्कि स्वयं को अन्य मुद्दों और विषयों से भी अवगत रखते हैं. इसलिए, यह कहा जा सकता है कि JIH मुस्लिम समुदाय के एक सुशिक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है.

कुछ लोगों में यह गलतफहमी है कि जमाअत में स्थिरता आ गई है या इसकी गतिविधियां सीमित हो गई हैं इसलिए इसे और अधिक सक्रिय होने की आवश्यकता है. सच्चाई यह है कि जमाअत इकामत-ए-दीन (इस्लाम धर्म की स्थापना) के अपने मिशन में मज़बूती से आगे बढ़ रही है, और यह आधुनिक तकनीक को अपनाते हुए इसमें तेजी ला रही है.

हालांकि, यह इस्लामी मूल्यों पर आधारित समाज की स्थापना में विश्वास करता है, लेकिन यह धर्मनिरपेक्ष और वामपंथी झुकाव वालों के साथ भी मंच साझा करता है. इसके अलावा, यह इस्लाम के प्रचार-प्रसार के लिए कल्याणकारी कार्यक्रम भी चलाता है.

मीडिया से लेकर मानवाधिकार के मुद्दों तक – यह हर क्षेत्र में अत्यधिक सक्रिय है. जमाअत इस्लामी ने नागरिक समाज के बीच अपना नेटवर्क विस्तार किया है. यह कोई साधारण बात नहीं है कि आज जमात से जुड़े सैकड़ों फ्रंटल संगठन काम कर रहे हैं. हालांकि, यह उनके बीच समन्वय बनाए रखने में सफल रहा है. जेआईएच पेशेवर तरीके से काम करता है. अन्य संगठन इसकी कार्य पद्धति से सीख सकते हैं.

इन तमाम खूबियों के बावजूद उस पर कई गंभीर आरोप लगते हैं. मुख्य आरोप यह है कि यह एक 'सांप्रदायिक संगठन' है. कुछ का यह भी कहना है कि जमाअत उसी तरह काम करती है जैसे हिंदू सांप्रदायिक संगठन करते हैं.

लेकिन जमाअत को सांप्रदायिक संगठन कहना किसी भी नज़रिए से दुरुस्त नहीं है. जमाअत के विचारों से मतभेद होने का मतलब यह नहीं है कि हम कहें कि यह एक 'सांप्रदायिक संगठन' है.

भारत में साम्प्रदायिक संगठन लोगों को धर्म के नाम पर बांटते हैं और हिंसा में लिप्त रहते हैं. लेकिन जमात-ए-इस्लामी हिंद मुसलमानों का एक उदार संगठन है जिसके नेता, सदस्य और कार्यकर्ता विभिन्न वैचारिक पृष्ठभूमि से आते हैं. इसके कैडर को किसी विशेष ड्रेस कोड को अपनाने या किसी निश्चित मसलक का पालन करने की कोई बाध्यता नहीं है.

जमात-ए-इस्लामी हिंद को सांप्रदायिक कहने वालों ने या तो इसे करीब से नहीं देखा है या अपने राजनीतिक स्वार्थों के चलते वे निराधार आरोप लगाते हैं. बहुसंख्यक समुदाय के बीच डर पैदा करने के लिए अक्सर अफवाहें फैलाई जाती हैं कि मुसलमानों का एक विशेष संगठन सांप्रदायिक है.

यह साबित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि आज तक जमाअत इस्लामी हिंद सांप्रदायिक घृणा के किसी भी कार्य में शामिल रहा है या उसने सांप्रदायिकता फैलाई है.

कुछ लोग इस हद तक पक्षपाती हैं कि वे जमाअत इस्लामी पर राष्ट्र-विरोधी गतिविधियों में शामिल होने या राष्ट्र-विरोधी विचारों को बढ़ावा देने का आरोप लगाते हैं. यह पूरी तरह झूठे आरोप हैं.

देश के स्वतंत्रता संग्राम और विकास में भारतीय मुसलमानों का योगदान और बलिदान किसी अन्य समुदाय से कम नहीं है. जब भी देश कठिन दौर से गुज़रा है, मुसलमानों के सभी धार्मिक संगठनों ने राष्ट्र की एकता और संप्रभुता को मज़बूत करने का काम किया है.

अल्पसंख्यकों के अधिकारों के लिए काम करने वाले किसी भी संगठन को निहित स्वार्थ के कारण सांप्रदायिक कह कर बदनाम किया जाता है और उसकी आवाज़ दबाने की कोशिश की जाती है. अतिवादी और असामाजिक तत्वों को यह नहीं पता कि भारत का दूसरा नाम विविधता है. इन कट्टर तत्वों को कोई यह बताए कि जब देश में सभी धर्मों के लोगों को समान अधिकार मिलेंगे तो राष्ट्र मज़बूत बनेगा. लेकिन दूसरी ओर देश की एकता और संप्रभुता तब तक नाज़ुक बनी रहती है जब तक कि कमज़ोर और वंचित वर्गों को न्याय नहीं मिल जाता.

मैं जमाअत की इस सफलता के लिए उसे मुबारकबाद देता हूं. साथ ही मैं कुछ बिंदु पर बात रखना चाहूंगा. सबसे पहले, जमाअत को खुद मुस्लिम संस्थानों के बीच एक-दूसरे के खिलाफ गलतफहमियों को दूर करने के लिए काम करना चाहिए. यह अफ़सोस की बात है कि मुस्लिम संस्थानों में लोकतांत्रिक मूल्यों का अभाव है. जबकि इस्लाम परामर्श और लोकतांत्रिक प्रक्रिया की एक प्रणाली निर्धारित करता है, इस्लामी संस्थान दुर्भाग्य से इन इस्लामी मूल्यों से दूर हैं.

दूसरी बात यह कि मिल्ली संगठनों के बीच एकता लाने की कोशिश करते हुए, मुसलमानों को सभी पीड़ितों के बीच एकता बनाने के लिए भी काम करना चाहिए, भले ही वे किसी भी पंथ और समुदाय के हों.

धर्म के नाम पर अन्याय हो रहा है, लेकिन जाति और लिंग के आधार पर मौजूद असमानता लोगों को बर्बाद कर रही है. क्लास और वर्गीय असमानता भी बढ़ रही है. उदाहरण के लिए, सभी मुसलमान एक मस्जिद में प्रार्थना करते हैं. लेकिन जब वे मस्जिद से बाहर निकलते हैं तो वही मुसलमान मालिक और नौकर में बंट जाते हैं.

जमात अपने नेतृत्व में कमज़ोर और पसमांदा वर्ग और महिलाओं को बढ़ावा दे. इसे दलितों, आदिवासियों, पसमांदा और अन्य वंचित वर्गों का समर्थन करना चाहिए. केवल यह कहना कि जमाअत के अमुक नेता पसमांदा समूहों से आते हैं और इसलिए जमाअत ने सामाजिक न्याय के अपने मिशन को पूरा किया है, पर्याप्त नहीं है.

मुसलमानों को यह महसूस करना चाहिए कि जाति व्यवस्था, आर्थिक असमानता और लैंगिक भेदभाव न केवल गैर-मुस्लिमों की समस्याएँ हैं बल्कि मुस्लिम समुदाय भी इस घातक बीमारी से प्रभावित है. मुसलमानों की अपनी गलतियों के कारण इस बीमारी ने मुस्लिम समुदाय को संक्रमित कर दिया है.

जमाअत के आलिम मुझसे बेहतर जानते हैं कि इस्लाम नमाज़ अदा करने और अन्य धार्मिक कर्तव्यों को निभाने के साथ-साथ गरीबों, ज़रूरतमंदों और विकलांगों की मदद करना सिखाता है. साथ ही न्याय और समानता इस्लाम के ही दूसरे नाम हैं. लेकिन कई मुस्लिम संस्थान इस्लाम की उपरोक्त शिक्षाओं का पालन नहीं कर रहे हैं. मुस्लिम संस्थानों को यह समझना चाहिए कि जब तक वे अपने संगठनों में कमज़ोर वर्गों को समायोजित नहीं करते हैं, तब तक उन्हें राज्य से सरकारी निकायों में मुसलमानों के लिए उचित प्रतिनिधित्व की मांग करने का कोई अधिकार नहीं है.

पूर्वाग्रह, अहंकार और भेदभाव की बीमारी से लड़े बिना मुस्लिम संस्थाएं अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकतीं. हालांकि, अगर मुस्लिम संगठन इन मुद्दों पर सोच-समझकर विचार करते हैं, तो उन्हें रात के अंधेरे में बहुसंख्यक समुदाय के सांप्रदायिक संगठनों से मिलने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी.

(लेखक जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से इतिहास में पीएचडी हैं. लेखक के विचार व्यक्तिगत हैं)